शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 जुलाई 2014

पालि काव्य साहित्य में 'लोकदीपसार'

डॉ. ज्ञानादित्य शाक्य
सहायक आचार्य
स्कूल ऑफ़ बुद्धिस्ट स्टडीज एण्ड सिविलाईजेशन
गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय, ग्रेटर नोएडा
गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

शाक्यमुनि गौतम बुद्ध की सम्बोधि-प्राप्ति के परिणामस्वरूप ही बुद्धवचन का अस्तित्व हो सका। पालि तिपिटक साहित्य एवं पालि काव्य साहित्य का गहरा सम्बन्ध है। पालि तिपिटक साहित्य के कारण ही पालि काव्य साहित्य का आविर्भाव सम्भव हो सका है। पालि तिपिटक साहित्य की विषयवस्तु को आधार मानकर ही विपुल पालि काव्य साहित्य का सृजन किया गया। पालि काव्य साहित्य भी पालि तिपिटक साहित्य के समान मानव जीवन के लिए अत्यधिक सार्थक सिद्ध हुआ। पालि काव्य साहित्य के अनेक ग्रन्थों में से 'लोकदीपसार' एक अद्‌वितीय ग्रन्थ है। आचार्य भदन्त मेधंकर थेर द्‌वारा विरचित 'लोकदीपसार' नामक ग्रन्थ, जिसकी रचना चौदहवीं शताब्दी में की गयी है, पालि काव्य-साहित्य की एक महत्वपूर्ण काव्य-कृति है। 'लोकदीपसार' एवं पञ्चगतिदीपन नामक ग्रन्थ की विषयवस्तुओं में साम्यता है। 'लोकदीपसार' नामक ग्रन्थ में प्रयुक्त भाषा-शैली भी विषयानुकूल है। 'लोकदीपसार' नामक ग्रन्थ में वर्णित सामग्री को बहुत ही सुन्दर व आकर्षक ढंग से प्रकाशित किया गया है। यह धार्मिक, व्यावहारिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक व साहित्यिक दृष्टि से एक उत्कृष्ट पालि काव्य-ग्रन्थ है।

मुख्य शब्द

शाक्यमुनि गौतम बुद्ध, बुद्धवचन, धम्मचक्कपवत्तनसुत्त, प्रतीत्य-समुत्पाद, पालि तिपिटक साहित्य, पालि काव्य साहित्य, सुमंगलविलासिनी, लोकदीपसार, लोकप्पदीपसार, पञ्चगतिदीपन, सासनवंस, उदान, धम्मपद, आचार्य भदन्त मेधंकर थेर, कर्मवाद के सिद्धान्त, आठ महानरक, संस्कारलोक, निरयगति, प्रेत्यगति, तिर्यक्गति, मनुष्यगति, सत्वलोक, अवकाशलोक एवं प्रकीर्णक-नय।

प्रस्तावना

यह सर्वविदित है कि सम्बोधि-प्राप्ति के बाद शाक्यमुनि गौतम बुद्ध ने अनुलोम-प्रतिलोम के रूप में प्रतीत्य-समुत्पाद चिन्तन किया। तदनन्तर उन्होंने सारनाथ में पंचवर्गीय ब्राह्मणों को धम्मचक्कपवत्तनसुत्त की देशना देकर अपने सद्धर्म की नींव रखी। सम्बोधि-प्राप्ति के बाद पैंतालीस वर्षों तक शाक्यमुनि गौतम बुद्ध द्‌वारा भाषित व अनुमोदित वचनों का संग्रह ही बुद्धवचन या बुद्धवाणी कहलाया है। कालान्तर में बुद्धवचन के संग्रह को ही पालि तिपिटक साहित्य के रूप में जाना गया, जो मागधी (पालि) भाषा में संगृहीत है। मागधी-भाषा को सम्यक् सम्बुद्ध द्‌वारा प्रयुक्त भाषा के रूप में बतलाते हुए साधुविलासिनी नामक ग्रन्थ में कहा गया है कि -

सा मागधी मूलभासा, नरा याया' दिकप्पिका।
ब्रह्मानो चस्सुतलापा, सम्बुद्धा चापि भासरे।।1

अर्थात् सभी बुद्ध मागधी भाषा में उपदेश देते हैं। यही भाषा मूलभाषा और ब्रह्मभाषा से लेकर नारकीय प्राणियों तक में व्यवहृत है।2

शाक्यमुनि गौतम बुद्ध द्वारा उपदेशित एवं अनुमोदित सम्पूर्ण बुद्धवचन को सात प्रकार से विभाजित किया जाता है। बुद्धवचन के सात विभाजनों में से कुछ विभाजन अत्यधिक प्राचीन हैं तथा वे पालि तिपिटक साहित्य के वर्तमान स्वरूप के निश्चित होने से पूर्वकाल के हैं। कालान्तर में यही सम्पूर्ण बुद्धवचन ग्रन्थों के रूप में संकलित किया गया। बुद्धवचन के सात वर्गीकरणों में से कुछ विभाजन तो शाक्यमुनि गौतम बुद्ध के समय में प्रचलित थे, लेकिन कुछ विभाजन उनके महापरिनिर्वाण के बाद अस्तित्व में आये। सम्पूर्ण बुद्धवचन के सातों विभागों को प्रकाशित करते हुए सुमंगलविलासिनी नामक ग्रन्थ के रचनाकार आचार्य बुद्धघोष कहते हैं कि 'एवमेतं सब्बं पि बुद्धवचनं रसवसेन एकविधं, धम्मविनयवसेन दुविधं पठममज्झिमपच्छिमवसेन तिविधं तथा पिटकवसेन, निकायवसेन पंचविध, अंगवसेन नवविधं, धम्मक्खन्धवसेन चतुरासीतिविधं ति वेदितब्बं।3 अर्थात् समस्त बुद्धवचन विमुक्ति रस प्रदान करने के कारण एक प्रकार का है; धम्म व विनय के अनुसार दो प्रकार का है; विनयपिटक, सुत्तपिटक, एवं अभिधम्मपिटक के अनुसार तीन प्रकार का है; प्रथम उपदेश, मध्यम उपदेश व अन्तिम उपदेश के अनुसार तीन प्रकार का है; दीघनिकाय, मज्झिमनिकाय, संयुत्तनिकाय, अंगुत्तरनिकाय व खुद्दकनिकाय के अनुसार पाँच प्रकार का है; सुत्त, गेय्य, वेय्याकरण, गाथा, उदान, इतिवुत्तक, जातक, अब्भुत-धम्म व वेदल्ल के अनुसार नौ प्रकार का है तथा धर्मस्कन्धों के अनुसार चौरासी हजार प्रकार का है। इसी प्रकार से गन्धवंस नामक ग्रन्थ के रचनाकार ने भी अपनी कृति में बुद्धवचन के सात विभाजनों में से पाँच प्रकार के वर्गीकरण का उल्लेख किया है।4

यह सर्वविदित है कि पालि तिपिटक साहित्य में संगृहीत सद्धर्म अत्यधिक गम्भीर व दुरूह है। इसे प्रत्येक व्यक्ति आसानी से समझ नहीं सकता है। बुद्धवचन की इसी गम्भीरता व दुरूहता को दूर करने, एवं पालि तिपिटक साहित्य की भाषा को आसान व सरल बनाने हेतु मूल पालि तिपिटक साहित्य को आधार बनाकर इस पर भाष्य व व्याख्या के रूप में अट्ठकथा साहित्य की रचना की गयी। तदनन्तर अट्ठकथा साहित्य को भी और अधिक सरल बनाने के लिए टीका व अनुटीका साहित्य की रचना की गयी। पालि तिपिटक साहित्य, अनुपालि साहित्य, एवं अट्ठकथा साहित्य आदि का एक दूसरे से गहरा सम्बन्ध है। इसीलिए अन्य उपजीवी साहित्य को पालि तिपिटक साहित्य का विस्तृत रूप होने के साथ-साथ एक अभिन्न अंग भी है। पालि तिपिटक साहित्य के सरलीकरण की इसी परम्परा के कारण कालान्तर में अनुपालि साहित्य, अट्ठकथा साहित्य, टीका साहित्य, अनुटीका साहित्य, वंस साहित्य, काव्य साहित्य, व्याकरण साहित्य, अलंकार साहित्य (काव्य-शास्त्र), एवं छन्द साहित्य के रूप में पालि साहित्य (बौद्ध साहित्य) की वृद्धि सम्भव हो सकी है। पालि तिपिटक साहित्य की यही वृद्धि मानव जीवन के लिए अत्यधिक सार्थक सिद्ध हुई।

सम्पूर्ण बुद्धवचन ही पालि तिपिटक साहित्य की आधारशिला है। सम्पूर्ण पालि तिपिटक साहित्य में काव्यात्मकता की झलक देखी जा सकती है; क्योंकि इसकी शुरुआत शाक्यमुनि गौतम बुद्ध की काव्यमयी वाणी से हुई है। सम्बोधि-प्राप्ति से लेकर महापरिनिर्वाण पूर्व तक के समयान्तराल में

उनके द्वारा भाषित व अनुमोदित समस्त उपदेशों में काव्यमयी वाणी की झलक देखने को मिलती है। उन्होंने बुद्धशासन (पालि तिपिटक साहित्य) में प्रथम वचन के द्वारा काव्य की स्थापना की। उनके इस प्रथम वचन को पालि तिपिटक साहित्य में उदान के रूप में जाना जाता है। सम्बोधि-प्राप्ति के बाद शाक्यमुनि गौतम बुद्ध ने बोधि-वृक्ष के नीचे प्रीतिसुख का आनन्द लेते हुए अपनी उत्कृष्ट उपलब्धि को अभिव्यक्त करते हुए उदानस्वरूप तीन पालि गाथापदों को अपने श्रीमुख से प्रस्रवित किया, जिन्हें शाक्यमुनि गौतम बुद्ध द्वारा उपदेशित सद्धर्म का प्रथम उदान कहा जाता है। प्रतीत्य-समुत्पाद धर्म की गम्भीरता व संसार की वास्तविकता का चिन्तन-मनन करते हुए अपने हृदयोद्गार को अभिव्यक्त करते हुये शाक्यमुनि गौतम बुद्ध कहते हैं कि -

यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा, आतापिनो झायतो ब्राह्मणस्स।
अथस्स कंखा वपयन्ति सब्बा, यतो पजानाति सहेतु धम्मा'न्ति।।5

अर्थात् जब उत्साह सम्पन्न, ध्यानाभ्यासरत ब्राह्मण के मन में चिन्तन करते-करते ये (उपर्युक्त प्रतीत्य-समुत्पाद-युक्त) धर्म उद्भूत (प्रकट) हो जाते हैं, तब इन सहेतुक धर्मों का सम्यक् ज्ञान हो जाने के कारण, उस ज्ञानी ब्राह्मण की सभी आकांक्षाएँ (सांसारिक तृष्णाएँ) शान्त हो जाती हैं।6

यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा, आतापिनो झायतो ब्राह्मणस्स।
अथस्स कंखा वपयन्ति सब्बा, यतो खयं पच्चयानं अवेदी' ति।।7

अर्थात् जब उत्साही एवं ध्यानाभ्यासरत ब्राह्मण को मन में चिन्तन करते-करते ये (उपर्युक्त प्रतीत्य-समुत्पाद-युक्त) धर्म उद्भूत (प्रकट) हो जाते हैं, तब इन प्रत्यय (हेतु) ज्ञान के कारण उस ज्ञानी ब्राह्मण की सभी सांसारिक आकांक्षाएँ क्षीण (शान्त) होने लगती हैं।8

यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा, आतापिनो झायतो ब्राह्मणस्स।
विधूपयं तिट्ठति मारसेनं, सुरियो व ओभसयमन्तलिक्ख' न्ति।।9

अर्थात् जब उत्साही एवं ध्यानाभ्यासरत ब्राह्मण को मन में चिन्तन करते-करते ये (उपर्युक्त प्रतीत्य-समुत्पाद-युक्त) धर्म उद्भूत (प्रकट) हो जाते हैं, तो वह मारसेना को परास्त करता हुआ लोक में उसी तरह देदीप्यमान रहता है, जैसे कि आकाश में सूर्य आलोकित रहता है।10

श्रीलंका की धम्मपद-भाणक परम्परा के अनुसार शाक्यमुनि गौतम बुद्ध के श्रीमुख से उद्भूत इन तीन गाथाओं के अलावा दो अन्य गाथाओं को भी 'प्रथम-उपदेश' के रूप में स्वीकार किया जाता है, जिन्हें भी 'प्रथम उदान' कहा जाता है। प्रतीत्य-समुत्पाद का अनुलोम एवं प्रतिलोम दृष्टि से चिन्तन-मनन करने के बाद शाक्यमुनि गौतम बुद्ध ने जन्म-मरण परम्परा के मूल हेतुओं के रूप में अविद्या एवं तृष्णा को स्वीकार किया है। सम्बोधि-प्राप्ति के बाद सौमनस्ययुक्त चित्त से अपनी अभूतपूर्व उपलब्धि को काव्यात्मकता से परिपूर्ण भाषा में बहुत ही सुन्दर ढंग से अभिव्यक्त करते हुए शाक्यमुनि गौतम बुद्ध कहते हैं कि -

अनेकजातिसंसारं संधाविस्सं अनिब्बिसं।
गहकारकं गवेसन्तो दुक्खा जाति पुनप्पुनं।।
गहकारक! दिट्ठोसि पुन गेहं न काहसि।
सब्बा ते फासुका भग्गा गहकूटं विसंखितं।
विसंखारगतं चित्तं तण्हानं खयमज्झगा।।11

अर्थात् बिना रुके हुऐ अनेक जन्मों तक संसार में दौड़ता रहा। (इस कायारूपी) कोठरी को बनाने

वाले (गृहकारक) को खोजते पुनः पुनः दुःख (मय) जन्म में पड़ता रहा। हे गृहकारक! (अब) तुझे पहचान लिया, (अब) फिर तू घर नहीं बना सकेगा। तेरी सभी कड़ियाँ भग्न हो गयीं, गृह का शिखर बिखर गया। संस्काररहित चित्त से तृष्णा का क्षय हो गया।12

पालि काव्य साहित्य

गम्भीर, शान्त, समाधियुक्त, सौमनस्ययुक्त व ज्ञानावस्था से परिपूर्ण वातावरण में शाक्यमुनि गौतम बुद्ध आदि आर्य पुद्गलों के श्रीमुख से निकले हृदयोद्गार ही उदान हैं, जिन्हें 'काव्य' के रूप में माना जा सकता है। उनके श्रीमुख से प्रस्रवित प्रथम-उदान से काव्य का आविर्भाव माना जा सकता है। बुद्धवचन में उनके द्वारा भाषित व अनुमोदित वचनों में विद्यमान काव्यात्मकता के तत्वों को देखा जा सकता है, जिसकी परिणति कालान्तर में पालि काव्य साहित्य के रूप में हुई। उनके श्रीमुख से निकलने वाले प्रथम-उदान के महत्व के सम्बन्ध में ऐसा कहा जा सकता है कि शाक्यमुनि गौतम बुद्ध द्वारा प्रस्रवित प्रथम-उदान ही पालि तिपिटक साहित्य में काव्य के उद्भव का मूल हेतु है, जिसके विकास के विपाकस्वरूप ही पालि काव्य साहित्य का आविर्भाव सम्भव हो सका। अर्थात् कहा जा सकता है कि पालि तिपिटक साहित्य से ही पालि काव्य साहित्य का विकास हुआ है। उनके द्वारा प्रस्रवित प्रथम-उदान ही पालि साहित्य में काव्य के उद्भव का मूल हेतु है, जिसके विकास के विपाकस्वरूप ही पालि काव्य साहित्य का आविर्भाव सम्भव हो सका।

बुद्धोपदिष्ट सद्धर्म को अभिव्यक्त करने के साथ-साथ पालि काव्य साहित्य में शाक्यमुनि गौतम बुद्ध के जीवन-चरित्र को भी काव्यात्मक शैली के माध्यम से बहुत ही सुन्दर, रोचक, एवं आकर्षक ढंग से प्रकाशित किया गया है। अतः पालि काव्य साहित्य की वर्ण्य-सामग्री बुद्धवचन है। पालि तिपिटक साहित्य के अन्तर्गत खुद्दकपाठ, धम्मपद, उदान, इतिवुत्तक, सुत्तनिपात, विमानवत्थु, पेतवत्थु, थेरगाथा, थेरीगाथा, अपदान, एवं चरियापिटक आदि पालि ग्रन्थों में इसी काव्यात्मकता की भरपूर झलक देखी जा सकती है। पालि तिपिटक साहित्य गद्य-पद्य मिश्रित साहित्य है। इसमें रसात्मकता, गेयात्मकता, एवं अलंकारिकता के तत्वों की उपस्थिति देखी जाती है, जिसके कारण ही पालि तिपिटक साहित्य में काव्यात्मकता की झलक देखी जा सकती है। इस प्रकार से पालि तिपिटक साहित्य के इन ग्रन्थों को प्रारम्भिक पालि काव्य साहित्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। प्रारम्भिक पालि काव्य साहित्य के विकास के कारण ही आधुनिक शुद्ध पालि काव्य साहित्य का अस्तित्व सम्भव हो सका है। पालि तिपिटक साहित्य में विद्यमान काव्यात्मकता का धीरे-धीरे विकास हुआ। काव्यात्मकता के तत्वों को परवर्ती साहित्य ने एक गति प्रदान की। पालि काव्य साहित्य का विकास के क्रम, एवं इतिहास को पालि तिपिटक साहित्य, अनुपिटक साहित्य, अट्ठकथा साहित्य, टीका साहित्य, अनुटीका साहित्य, वंस साहित्य, व्याकरण साहित्य, अलंकार साहित्य, एवं छन्द साहित्य आदि में वर्णित काव्यात्मकता को इनके ग्रन्थों में विद्यमान गाथा, उदान, एवं इतिवुत्तक आदि की उपस्थिति के माध्यम से समझा जा सकता है।

बुद्धोपदिष्ट सद्धर्म के अनुसार पालि तिपिटक साहित्य एवं परवर्ती साहित्य की ऐसी रचनाओं, जो रसात्मकता व अलंकारिक भाषा-शैली से परिपूर्ण हों, को 'काव्य' कहना उचित नहीं माना जाता है। काव्य-शास्त्र में वर्णित 'काव्य' के लक्षणों को आधार पर ऐसा कहा जा सकता है

कि शब्द और अर्थयुक्त, रसात्मकता से युक्त, अलंकारिकता से युक्त, पददोष एवं वाक्यदोष से मुक्त, छन्द-योजना से युक्त, मधुर शब्दों से युक्त, शब्द-तत्व, अर्थ-तत्व, भाव-तत्व, कल्पना-तत्व एवं बुद्धि-तत्व से युक्त, गेयात्मकता से युक्त तथा प्रसन्नता एवं आनन्द से युक्त रचना से युक्त रचना ही 'काव्य' होती है।

पालि तिपिटक साहित्य में वर्णित सामग्री के कारण ही पालि काव्य साहित्य का आविर्भाव सम्भव हो सका है। पालि आचार्यों, एवं कवियों ने पालि तिपिटक साहित्य में वर्णित सामग्री को आधार मानकर काव्य-ग्रन्थों की रचना करके पालि काव्य साहित्य के विकास में अपना अभूतपूर्व योगदान दिया है। पालि आचार्यों एवं कवियों ने मुख्य रूप से शाक्यमुनि गौतम बुद्ध की जीवनी को आधार मानकर पालि काव्य-ग्रन्थों की रचना की। पालि काव्य साहित्य में विरचित काव्य-ग्रन्थों को शब्दार्थ, अलंकारिकता, रसात्मकता, गेयात्मकता, लयात्मकता, छन्दोबद्ध, शब्द-तत्व, अर्थ-तत्व, भाव-तत्व, कल्पना-तत्व और बुद्धि-तत्व से युक्त, पददोष एवं वाक्यदोष से मुक्त तथा प्रसन्नता, आनन्द एवं सुख-शान्ति प्रदान करने वाली भाषा-शैली एवं सामग्री से परिपूर्ण माना जा सकता है।

पालि काव्य साहित्य के आविर्भाव का मूलाधार पालि तिपिटक साहित्य ही है। पालि काव्य साहित्य के अन्तर्गत उन्हीं काव्य-ग्रन्थों को रखा गया है, जो दसवीं सदी से लेकर आधुनिक काल तक पालि भाषा में रचित पद्य या गद्य मिश्रित पद्य रचनाएँ हैं। प्रायः लोग यह कह देते हैं कि बुद्धवचन तो नीरस है, जो केवल साधु-सन्त, एवं वैरागियों की ही विषयवस्तु है, जो एक असत्य दृष्टिकोण है। पालि तिपिटक साहित्य में भी रस का उपादान है, जिसके कारण ही पालि काव्य-ग्रन्थों का सृजन सम्भव हो सका है। पालि काव्य साहित्य के अन्तर्गत मुख्य रूप से वर्णनात्मक काव्य, एवं काव्य-आख्यान के रूप में विरचित पालि काव्य-ग्रन्थ देखने को मिलते हैं। पालि तिपिटक साहित्य में वर्णित सामग्री व शाक्यमुनि गौतम बुद्ध की जीवनी को आधार मानकर पालि आचार्यों व कवियों ने पालि काव्य-ग्रन्थों के रूप में एक विपुल साहित्य का सृजन किया, जिसके परिणामस्वरूप पालि काव्य साहित्य को एक विशेष गति मिल सकी। पालि आचार्यों व कवियों द्वारा विरचित काव्य-ग्रन्थों का सतत् प्रवाह अभी भी जारी है, जिसके कारण ही पालि काव्य साहित्य के अन्तर्गत विरचित पालि काव्य-ग्रन्थों की संख्या में दिनोंदिन वृद्धि होती जा रही है।

पालि काव्य ग्रन्थ

पालि काव्य साहित्य एक विस्तृत व महत्वपूर्ण साहित्य कहा जा सकता है। प्राप्त जानकारी के अनुसार पालि काव्य साहित्य के अन्तर्गत कुल बयालीस काव्य-ग्रन्थों का नाम लिया जा सकता है। इन ग्रन्थों को आचार्य भदन्त रट्ठपाल थेर द्वारा विरचित सहस्सवत्थुप्पकरण (सहस्सवत्थु-अट्ठकथा), आचार्य भदन्त कस्सप थेर द्वारा विरचित अनागतवंस, आचार्य भदन्त धम्मनन्दी थेर द्वारा विरचित सिंहलवत्थुकथा, आचार्य भदन्त बुद्धरक्खित थेर द्वारा विरचित जिनालंकार, आचार्य भदन्त वनरतन मेधंकर थेर द्वारा विरचित जिनचरित, आचार्य भदन्त आनन्द महाथेर द्वारा विरचित सद्धम्मोपायन, आचार्य भदन्त बुद्धप्पिय थेर द्वारा विरचित पज्जमधु, आचार्य भदन्त कल्याणिय थेर द्वारा विरचित तेलकटाहगाथा, आचार्य भदन्त वेदेह थेर द्वारा विरचित रसवाहिनी (मधुरसवाहिनी या मधुररसवाहिनी), आचार्य भदन्त वनरतन आनन्द महाथेर द्वारा विरचित उपासकजनालंकार, आचार्य

भदन्त सिद्धत्थ थेर द्वारा विरचित सारत्थसंगह (सारसंगह), आचार्य सिरि धम्मराजा क्यच्वा द्वारा विरचित सद्दबिन्दु, आचार्य भदन्त मेधंकर थेर द्वारा विरचित लोकदीपसार (लोकप्पदीपसार), अज्ञात रचनाकार द्वारा विरचित पञ्चगतिदीपन, आचार्य भदन्त रट्ठसार थेर द्वारा विरचित भूरिदत्त-जातक, हत्थिपाल-जातक एवं संवर-जातक, आचार्य भदन्त तिपिटिकालंकार थेर द्वारा विरचित वेस्सन्तर-जातक, आचार्य भदन्त सीलवंस थेर द्वारा विरचित बुद्धालंकार, आचार्य सिरि गतारा उपतपस्सी द्वारा विरचित वुत्तमालासन्देससतकं, अज्ञात रचनाकार द्वारा विरचित कायविरतिगाथा, आचार्य भदन्त ञाणाभिवंस महाथेर द्वारा विरचित राजाधिराजविलासिनी, आचार्य भदन्त ञाणाभिवंस महाथेर द्वारा विरचित चतुसामणेरवत्थु, राजोवादवत्थु एवं तिगुम्बथोमण, अज्ञात रचनाकार द्वारा विरचित मालालंकारवत्थु, आचार्य सरणंकर संघराज द्वारा विरचित अभिसम्बोधिलंकार, आचार्य गिनेगथ द्वारा विरचित तिरतनमाला, आचार्य भदन्त विमलसार-तिस्स थेर द्वारा विरचित सासनवंसदीप, आचार्य भदन्त धम्मकित्ति थेर 'संघराज' द्वारा विरचित पारमीमहासतक (पारमीसतक), आचार्य छक्किन्दाभिसिरि द्वारा विरचित लोकनीति, अज्ञात रचनाकार द्वारा विरचित रतनपञ्जर, अज्ञात रचनाकार द्वारा विरचित नमक्कार, आचार्य भदन्त सिद्धत्थ धम्मानन्द थेर द्वारा विरचित लोकोपकार, आचार्य रतनजोति (मातले) द्वारा विरचित सुमंगलचरित, आचार्य धम्माराम (यक्कडुव) द्वारा विरचित धम्मारामसाधुचरित, आचार्य जिनवंस (मिगमुवे) द्वारा विरचित भत्तिमालिनी, आचार्य भदन्त विदुरुपोल पियतिस्स थेर द्वारा विरचित कमलाञ्जलि, आचार्य भदन्त विदुरुपोल पियतिस्स थेर महाकस्सपचरित, आचार्य भदन्त विदुरुपोल पियतिस्स थेर महानेक्खम्मचम्पू, आचार्य भदन्त मोरटुवे मेघानन्द थेर द्वारा विरचित जिनवंसदीपनी (जिनवंसदीप) तथा आचार्य भदन्त सुमंगल (गोवुस्स) थेर द्वारा विरचित मुनिन्दापदान के नाम से जाना जा सकता है।

यह सर्वविदित है कि पालि काव्य साहित्य की रचना का मूल आधार पालि तिपिटक साहित्य ही रहा है। पालि काव्य साहित्य की वर्ण्य-सामग्री बुद्धवचन है। बुद्धवचन की विषयवस्तु के रूप में बुद्धोपदिष्ट सद्धर्म को अभिव्यक्त करने के साथ-साथ पालि काव्य साहित्य ने शाक्यमुनि गौतम बुद्ध के जीवन-चरित्र को भी काव्यात्मक शैली के माध्यम से बहुत ही सुन्दर ढंग से प्रकाशित किया है, जो पालि काव्य साहित्य की एक महत्वपूर्ण विशिष्टता है। पालि तिपिटक साहित्य में सम्बोधि-प्राप्ति से लेकर महापरिनिर्वाण तक के काल में शाक्यमुनि गौतम बुद्ध द्वारा उपदेशित व अनुमोदित वाणी को ही मूल रूप से प्रकाशित किया गया है। प्रारम्भिक काव्य साहित्य में उनके बाल्यकाल की चर्चा बहुत ही कम मात्रा में देखने को मिलती है, लेकिन आधुनिक पालि काव्य साहित्य में उनके बाल्यकाल से लेकर महापरिनिर्वाण काल तक की अवधि की घटनाओं तथा उनके द्वारा उपदेशित धर्म को बहुत ही सुन्दर व आकर्षक ढंग से प्रकाशित किया गया है। आधुनिक पालि काव्य साहित्य ने अपनी काव्य रचनाओं के माध्यम से विश्व साहित्य को अमूल्य निधि प्रदान की है। आधुनिक पालि काव्य साहित्य ने धर्म-दर्शन के साथ-साथ विश्व की सामाजिक, राजनीतिक, भौगोलिक, ऐतिहासिक व साहित्यिक वातावरण को भी प्रकाशित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसीलिए

आधुनिक पालि काव्य साहित्य न केवल मानव जाति, अपितु प्राणिमात्र के लिए एक प्रेरणास्रोत है। इसी आधुनिक पालि काव्य साहित्य की एक महत्वपूर्ण शृंखला में लोकदीपसार13 नामक ग्रन्थ का भी नाम अग्रणी है।

लोकदीपसार और पालि काव्य साहित्य

लोकदीपसार नामक ग्रन्थ के मूल पालि-पाठ उपलब्ध न होने के कारण ग्रन्थ की विस्तार से साहित्यिक समीक्षा नहीं की जा सकती है, फिर भी प्राप्त स्रोतों के आधार पर, अधिक से अधिक सूचनाओं के आधार पर ऐसा कहा जा सकता है कि यह ग्रन्थ पालि काव्य-साहित्य की एक अद्‌वितीय काव्य-कृति है। इस ग्रन्थ को लोकप्पदीपसार14 के नाम से भी जाना जाता है। पालि काव्य-ग्रन्थ के रूप माना जाने वाले लोकदीपसार नामक ग्रन्थ के रचनाकार आचार्य भदन्त मेधंकर थेर कहे जाते हैं। इस ग्रन्थ के रचनाकार के सम्बन्ध में विभिन्न मत हैं, जिन्हें निम्नलिखित रूप से समझा जा सकता है कि सासनवंस नामक ग्रन्थ के अनुसार आचार्य भदन्त मेधंकर थेर ने लोकदीपसार नामक ग्रन्थ की रचना बरमा देश में की है। आचार्य भदन्त मेधंकर थेर ने बौद्ध धर्म के अध्ययन हेतु श्रीलंका में प्रवास किया था और बाद में वे बरमा देश के मर्तमान में रहे। आचार्य भदन्त मेधंकर थेर को लोकदीपसार नामक ग्रन्थ का रचनाकार बतलाते हुए सासनवंस नामक ग्रन्थ में कहा गया है कि ताय च थेरपरम्पराय मुत्तिमनगरवासी मेधंकरथेरो लोकदीपसारं नाम गन्धं अकासि।15 सासनवंस नामक ग्रन्थ में वर्णित मुत्तिमनगरवासी आचार्य भदन्त मेधंकर थेर को लोकदीपसार नामक ग्रन्थ का रचनाकार बतलाते हुए जी.पी. मललसेकर कहते हैं कि A collection of chapters on different subjects - hell, animal kingdom etc. - written by Medhankara of Muttimanagara.16 गन्धवंस नामक ग्रन्थ में आचार्य भदन्त मेधंकर थेर को नव मेधंकर नामक आचार्य के रूप में बताया गया है। गन्धवंस नामक ग्रन्थ के अनुसार आचार्य भदन्त मेधंकर थेर ने लोकदीपसार नामक ग्रन्थ की रचना आत्म-प्रेरणा से की है, जिसे अभिव्यक्त करते हुए गन्धवंस नामक ग्रन्थ में आचार्य नन्दपञ्ञ थेर कहते हैं कि लोकदीपसारं नाम पकरणं अत्तनो मतिया नवेन मेधंकराचरियेन कतं।17 नव मेधंकर (आचार्य भदन्त मेधंकर थेर) को लोकदीपसार नामक ग्रन्थ का रचनाकार बतलाते हुए आचार्य नन्दपञ्ञ थेर कहते हैं कि नव मेधंकरो नामाचरियो लोकदीपसारं नाम पकरणं अकासि।18

त्रिपिटकाचार्य डॉ.भिक्षु धर्मरक्षित के अनुसार लोकदीपसार नामक ग्रन्थ की रचना राजगुरू आरण्यक मेधंकर संघराज19 ने की है। ग्रन्थ के रचनाकार मूल रूप से श्रीलंका के निवासी थे। राजगुरू आरण्यक मेधंकर संघराज ने श्रीलंका से स्याम (थाईलैण्ड) जाकर वहाँ पर विहार करते समय लोकदीपसार नामक ग्रन्थ की रचना की है। ग्रन्थ के रचनाकार ने ग्रन्थ के अन्त में अपने सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण सूचनाएँ प्रदान की हैं, जिसके आधार पर राजगुरू आरण्यक मेधंकर संघराज को लोकदीपसार नामक ग्रन्थ का रचनाकार बतलाते हुए त्रिपिटकाचार्य डॉ.भिक्षु धर्मरक्षित कहते हैं कि यह ग्रन्थ (लोकदीपसार नामक ग्रन्थ) लंकाद्‌वीप के अरण्यवासी प्रशंसनीय महास्थविरों के वंशज मेधंकर महास्थविर संघराज द्‌वारा लिखा गया है।20 इस प्रकार उपर्युक्त प्रमाणों एवं स्रोतों के आधार इस ग्रन्थ के रचनाकार के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि लोकदीपसार नामक ग्रन्थ आचार्य भदन्त मेधंकर थेर द्‌वारा विरचित एक श्रेष्ठ पालि काव्य-ग्रन्थ

है, जो पालि काव्य-साहित्य की एक अमूल्य निधि है।

लोकदीपसार नामक ग्रन्थ का रचनाकाल चौदहवीं शताब्दी माना जाता है। सासनवंस नामक ग्रन्थ के अनुसार लोकदीपसार नामक ग्रन्थ को चैदहवीं शताब्दी की रचना बतलाते हुए डॉ.भरत-सिंह उपाध्याय कहते हैं कि यह चौदहवीं शताब्दी के बरमी भिक्षु मेधंकर की रचना है, जिन्होंने अध्ययनार्थ सिंहल में प्रवास किया था और जो बाद में मर्तमान (बरमा) में आर रहे।21 लेकिन, जब हम त्रिपिटकाचार्य डॉ.भिक्षु धर्मरक्षित द्वारा लोकदीपसार नामक ग्रन्थ के अन्त में प्रदत्त सूचनाओं का अध्ययन करने से ऐसा प्रतीत होता है कि लोकदीपसार नामक ग्रन्थ का रचना श्रीलंका देश में की गयी है। इसको राजा पराक्रमबाहु के शासनकाल में विरचित रचना बतलाते हुए त्रिपिटकाचार्य डॉ.भिक्षु धर्मरक्षित कहते हैं कि यह राजगुरू आरण्यक मेधंकर संघराज की रचना है, जो पराक्रमबाहु (बुद्धाब्द-1979) के समय में लंका में हुये थे। वे पीछे लंका से स्याम गये और वहीं रहते हुये उन्होंने इस ग्रन्थ को लिखा।22 इस प्रकार से उपर्युक्त प्रमाणों एवं स्रोतों के आधार ऐसा कहा जा सकता है कि लोकदीपसार नामक ग्रन्थ आचार्य भदन्त मेधंकर थेर द्वारा विरचित एक श्रेष्ठ पालि काव्य-ग्रन्थ है - जो चौदहवीं शताब्दी में विरचित पालि काव्य-साहित्य की एक अमूल्य निधि है।

आचार्य भदन्त मेधंकर थेर ने लोकदीपसार नामक ग्रन्थ में वर्णित विषयवस्तु को मूल रूप से पालि तिपिटक साहित्य, अट्ठकथा-साहित्य एवं महावंस नामक ग्रन्थ से ली है जिससे यह स्पष्ट होता है कि प्राणी के द्वारा सम्पादित कर्मों एवं पाँच गतियों या योनियों का बहुत घनिष्ट सम्बन्ध होता है। बुद्धोपदिष्ट सद्धर्म में पाँच गतियों या योनियों का वर्णन मिलता है जिससे कर्मवाद के सिद्धान्त की व्याख्या होती है। बुद्धोपदिष्ट सद्धर्म में पाँच गतियों या योनियों - नरक-योनि, पशु-योनि, भूत-प्रेतादि की योनि, मनुष्य-योनि एवं देव-योनि को विस्तारपूर्वक वर्णन मिलता है। प्राणी के द्वारा सम्पादित कुशल एवं अकुशल कर्मों के विपाकस्वरूप ही पाँच गतियों या योनियों को प्राप्त करके सुख या दुःख भोगना पड़ता है। शाक्यमुनि गौतम बुद्ध ने प्राणियों के हित-सुख के लिए सद्धर्म की देशना की है जिसमें कर्म एवं उसके विपाक के महत्व को विस्तारपूर्वक समझाया है। प्राणी अपने द्वारा सम्पादित कर्मों के अनुसार ही जीवन में सुख या दुःख को प्राप्त करता है। प्राणी अपने जीवन में मन, वचन एवं शरीर के द्वारा विभिन्न कर्मों के सम्पादन करता है। प्राणी अपने कुशल-कर्मों के द्वारा सुगति को प्राप्त करता है तथा अकुशल-कर्मों के द्वारा दुर्गति को प्राप्त करता है। कुशल-कर्मों के द्वारा प्राणी अच्छी योनि को प्राप्त करता है तथा अकुशल-कर्मों के द्वारा प्राणी निम्न योनि को प्राप्त करता है। शाक्यमुनि गौतम बुद्ध ने सञ्जीव, कालसुत्त, संघात, जालरोरुव, धूमरोरुव, तापन, पतापन, एवं अवीचि के रूप में आठ महानरक की व्याख्या की है जो दुःखों एवं कष्टों से परिपूर्ण होते हैं। आठ महानरक में विद्यमान दुःखों एवं कष्टों से बचने के लिए शाक्यमुनि गौतम बुद्ध ने प्राणियों को निरन्तर ही कुशल-कर्मों के सम्पादन हेतु प्रेरित किया है।

आचार्य भदन्त मेधंकर थेर ने पाँच गतियों या योनियों के वर्णन के साथ-साथ इनमें सन्निहित नैतिक उपदेशों को भी सुन्दर एवं आकर्षक ढंग से प्रकाशित किया गया है। इसमें वर्णित सामग्री के माध्यम से मानव जीवन के व्यावहारिक, सामाजिक, आध्यात्मिक व मनोवैज्ञानिक पक्षों को

प्रकाशित किया गया है। ग्रन्थ में वर्णित विषयवस्तु को प्रकाशित करते हुए त्रिपिटकाचार्य डॉ भिक्षु धर्मरक्षित कहते हैं कि ग्रन्थ आठ परिच्छेदों में विभक्त है और गद्य तथा पद्य दोनों में ही है। इसमें क्रमशः संस्कारलोक, निरयगति, प्रेत्यगति, तिर्यक्गति, मनुष्यगति, सत्वलोक, अवकाशलोक एवं प्रकीर्णक-नय - कुल आठ विषयों के अन्तर्गत वर्ण्य-विषय विभक्त हैं।23

निष्कर्ष

इस प्रकार से विषयवस्तु की दृष्टि से लोकदीपसार नामक ग्रन्थ एक श्रेष्ठ पालि काव्य-ग्रन्थ प्रतीत होता है। इसमें वर्णित विषयवस्तु के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि लोकदीपसार एक ऐसा संकलन है, जिसमें पापकर्मों के दुष्परिणाम, कुशल-कर्मों के सुपरिणाम, प्राणियों को प्राप्त होने वाली पाँच गतियों या योनियों के कारणों एवं दुर्गति से मुक्त होने में सहायक नैतिकता से परिपूर्ण महत्वपूर्ण तथ्यों का संकलन किया गया है। विषयवस्तु की दृष्टि से लोकदीपसार की साम्यता की तुलना पञ्चगतिदीपन24 नामक ग्रन्थ से की जा सकती है। इस प्रकार से लोकदीपसार नामक ग्रन्थ एवं पञ्चगतिदीपन नामक ग्रन्थ में प्रयुक्त भाषा-शैली में समानता होना भी एक स्वाभाविक सत्य है। पञ्चगतिदीपन नामक ग्रन्थ के समान ही लोकदीपसार नामक ग्रन्थ में वर्णित सामग्री को बहुत ही सुन्दर व आकर्षक ढंग से प्रकाशित किया गया है। लोकदीपसार नामक ग्रन्थ में प्रयुक्त भाषा-शैली ग्रन्थ की सामग्री के अनुकूल प्रतीत होती है।

आचार्य भदन्त मेधंकर थेर द्वारा विरचित लोकदीपसार नामक ग्रन्थ, जिसकी रचना चौदहवीं शताब्दी में की गयी है, पालि काव्य-साहित्य की एक महत्वपूर्ण काव्य-कृति है। पञ्चगतिदीपन नामक ग्रन्थ के समान ही लोकदीपसार नामक ग्रन्थ सारगर्भित विषयवस्तु से परिपूर्ण है। यह धार्मिक, व्यावहारिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक व साहित्यिक दृष्टि से एक उत्कृष्ट पालि काव्य-ग्रन्थ है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1.साधुविलासिनी (सीलक्खन्धवग्ग-अभिनवटीका) (रचयिता) महाथेरो ञाणाभिवंस-धम्मसेनापति, इगतपुरीः विपश्यना विशोधन विन्यास, 1993, पृ.26

2.बौद्ध धर्म-दर्शन तथा साहित्य, भिक्षु धर्मरक्षित, वाराणसीः नन्दकिशोर एण्ड ब्रदर्स, 1943, पृ.90

3.सुमंगलविलासिनी पठमो भागो (दीघनिकाय-अट्ठकथा) (संशोधक) महेश तिवारी शास्त्री, नालन्दाः नव नालन्दा महाविहार, 1974, पृ.21

4.सब्बं पि बुद्धवचनं, विमुत्तिरसहेतुकं। होति एकं विधं येव, तिविधं पिटकेन च। तं च सब्बं पि केवलं, पंचविधं निकायतो। अंगतो च नवविधं, धम्मक्खन्धगणनतो। चतुरासीतिसहस्सधम्मखन्धप्पभेदनं ति। गन्धवंसो (सम्पादक) बिमलेन्द्र कुमार, दिल्लीः ईस्टर्न बुक लिंकर्स, 1992, पृ.1

5.उदानपालि, इगतपुरीः विपश्यना विशोधन विन्यास, 1995, पृ.70

6.महावग्गपालि (अनुवादक एवं सम्पादक) स्वामी द्वारिकादास शास्त्री, वाराणसीः बौद्ध-भारती, 1998, पृ.4

7.उदानपालि, वही, पृ.70

8.महावग्गपालि, वही, पृ.4

9.उदानपालि, वही, पृ.71

10.महावग्गपालि, वही, पृ.5

11.धम्मपद (अनुवादक) राहुल सांकृत्यायन, लखनऊः बुद्ध विहार, रिसालदार पार्क, 1986. पृ.70

12.वही

13.भरत-सिंह उपाध्याय, पालि-साहित्य का इतिहास, प्रयागः हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 2000, पृ.738

14.सासनवंसो (संशोधक) चन्द्रिका सिंह उपासक, नालन्दाः नव नालन्दा महाविहार, 1961, पृ.45

15.वही

16.Dictionary of Pali Proper Names, Vol.II, Ed. G.P. Malalasekera, New Delhi: Munshiram Manoharlal Private Limited, 2002, P.786

17.गन्धवंसो, वही, पृ.25

18.वही, पृ.12

19.भिक्षु धर्मरक्षित, पालि-साहित्य का इतिहास, वाराणसीः ज्ञानमण्डल लिमिटेड, 1988, पृ.197

20.वही

21.भरत-सिंह उपाध्याय, पालि-साहित्य का इतिहास, वही, पृ.738

22.भिक्षु धर्मरक्षित, पालि-साहित्य का इतिहास, वही, पृ.197

23.वही

24.भरत-सिंह उपाध्याय, पालि-साहित्य का इतिहास, वही, पृ.73